बेचारा!

बर्मा के भगोड़ों ने इतिहासविश्रुत, अशरणशरण प्रयागराज के निवासियों को कितना आश्रयहीन बना दिया है, यह बात यों ही ज़रा मुश्किल से समझ में आती है। व्यासशैली में कुछ कहना पड़ेगा।

वह घर पुराने कटरे में है। दोमंज़िला है। नीचे की मंज़िल में आँटा-दाल-चावल की दूकान है, ऊपर की मंज़िल में मेरे दोस्त रामचन्द्र रहते हैं। साँवले-साँवले से आदमी हैं, मँझोले क़द के हैं, यही पाँच फुट पाँच इंच, घुँघराले बाल हैं, डेढ़हरे बदन के हैं (यानी इकहरे से कुछ ज़्यादा और दोहरे से कुछ कम), चश्मा लगाते हैं, एक हाई स्कूल में अध्यापक हैं। कुर्ता-पाजामा, अचकन, गान्धी टोपी उनकी आम पोशाक है। यों वे सूट भी पहनते हैं, लेकिन सब शुद्ध खद्दर का। अच्छा यह भी आप समझ लीजिए कि ये बातें मैं आपको यों ही नहीं बतला रहा हूँ। इस हुलिये को अपने दिल की पटिया पर अच्छी तरह, मोची के सूजों से खोद लीजिए क्योंकि अगर कभी आपकी इच्छा भी उनसे मिलने की हुई तो इसके बग़ैर आप जिन्दगी भर टक्करें मारते रहिएगा और कभी उनसे न मिल पाइएगा। यह बात लखौरी ईंट की तरह पक्की है। इसकी वजह भी तो है। वह यह कि उनके घर का ज़ीना हमेशा बाहर से लगा रहता

है अर वहीं उस थोड़े से चबूतरे पर या तो बकरी अपने पुत्र-कलत्र और अपनी समस्त संपदा के साथ बँधी रहती है या लाला की दूकान के गाहक अच्छी तरह आसन मारकर सौदा सुलुफ किया करते हैं। ग़रज़ यह कि वह जगह अच्छी तरह छिंकी रहती है और सहसा पता नहीं चलता कि लाला की सद्यः प्रसूता अजा जिस द्वार पर प्रहरी की भाँति खड़ी है, वही मेरे मित्र रामचन्द्रजी के घर का प्रवेशद्वार है। कई बार धोखा खा चुका हूँ लेकिन यह घर कुछ ऐसा गोरखधंधा है कि बार बार छक जाता हूँ। आज भी वही हुआ।

लाला ज़रा बदज़बान मशहूर है, इसलिए मैंने डरते डरते पूछा—क्यों भाई, वो मास्टर साहब इसी मकान में रहते हैं न?

—कौन, वही, काले-काले, चश्मा लगाते हैं?

मैंने कहा अबकी धोखा नहीं हुआ और सायकिल खड़ी करने का उपाय करने लगा।

दरवाज़ा खोलकर घुसा ही था कि रामचन्द्रजी का द्विचक्रयान मुझे हठयोग की एक अत्यन्त कठिन मुद्रा में लटकता दिखायी पड़ा। एक मोटी रस्सी, जी हाँ, काफ़ी मोटी जिससे सायकिल तो क्या यदि बाणासुर को कस दिया जाता तो वह भी चीं बोल देता, ऊपर से नीचे तक बँधी हुई थी और उसे साइकिल के लैंपस्टैण्ड, हैंडिल और सीट के लोहेवाले हिस्से के बीच से निकालकर और और भी कुछ कुछ करके बहुत कौशलपूर्वक नाँधकर उल्टा टाँग दिया गया था। मैंने कहा, देखो अध्यापक रामचन्द्र अपने सिद्धान्तों का कितना पक्का है। इसके यहाँ साइकिल के लिए भी दण्ड का विधान है। ज़रूर स्कूल जाते समय पंचर हो गयी होगी और बेचारा 'लेट' हो गया होगा, इसलिए इसको यह हैंग अपान द रोप की सजा मिली है। इसके न्याय के समक्ष जड़ और चेतन समान रूप से दंड के अधिकारी हैं। यही गीता का सच्चा स्थितप्रज्ञ है।

मैंने कल्पना की कि इस द्विचक्रयान का सारथी यदि हर बार आने के

साथ अपने यान को थान पर बाँधता और जाते समय खोलता है, तो वह निश्चय ही असाधारण वीर है। मैंने मन ही मन उसे श्रद्धा से नमस्कार किया और उस तंग सीढ़ी को कामयाबी के साथ घेरे हुए हैंडिलों से अपनी आँखों को बचाता हुआ अपने संकटापन्न मार्ग पर आगे बढ़ा।

जाकर दरवाज़े पर दस्तक दी।

दरवाज़ा खुला और मैंने रामचन्द्रजी के दर्शन किये या शायद यह कहना अधिक ठीक होगा कि रामचन्द्रजी ने मेरे दर्शन किये क्योंकि इस दुर्द्धर्ष यात्रा के बाद दर्शनीय यदि कोई था तो वह मैं। तो रामचन्द्रजी ने मेरे दर्शन किये और आह्लाद से भर उठे। बोले—बड़े भले वक्त से आये, केशव। गरम गरम हलुआ खाओ। डरो नहीं, नीचेवाले लाला की दूकान का आँटा नहीं है।

मैंने अपने को संकट से निकला हुआ जान, लम्बी-लम्बी साँस लेनी शुरू की और रामचन्द्रजी के बाहुपाश से अपने को मुक्त करते हुए कहा—हलुआ फिर खाऊँगा, हलुआ अच्छी चीज़ है, पहले एक तार मेरी माँ को दे दो कि मैं कुशलपूर्वक अपने गन्तव्य पर पहुँच गया।

रामचन्द्र ने हँसते हुए कहा—क्यों खैरियत तो है, पूरे पूरे तो आ गये दिखाई पड़ते हो, या कोई अंग यात्रा की इस जान जोखिम में छूट गया?

—छूट तो जाता लेकिन छोड़ा नहीं मैंने। पर तुम्हारी साइकिल ने तो मुझे अन्धा बनाने का संकल्प-सा कर लिया था। बड़ी मुशकिल से मैं उसे हतोत्साह कर पाया।

रामचन्द्रजी मुग्ध दृष्टि से हलुए को देख रहे थे। मैंने और अधिक देर उनके और हलुए के बीच खड़े होने को निर्ममता की पराकाष्ठा समझ अपनी बात जल्दी से खतम की।

मेरी आवाज़ सुनकर रामचन्द्र की माँ और मौसी चौके में से निकल

आयीं। लेकिन उनके आते आते हम लोग हलुए का काम तमाम कर चुके थे, इसलिए निश्चिन्त होकर मैंने उन्हें प्रणाम करते हुए कहा—अपनी बहू को आपने नहीं बुलाया ?

मौसी ने उत्तर दिया—क्या करें बेटा, घर गुज़र-बसर लायक़ भी तो हो। इस घर में भला बहू रह सकती है ?

माँ ने बहुत सादगी से कहा—मुन्नी (रामचन्द्र) घर ढूँढ़ रहे हैं। जैसे ही कोई घर मिलेगा, बहू को बुला लूँगी।

रामचन्द्र को लगा जैसे इन दो बुढ़ियों ने उसके घाव पर नमक छिड़कना ही अपना काम बना लिया है। मौसी अगर मुर्गा हलाल करने-वाली छुरी हाथ में लिये घाव करने को उद्यत हैं तो माँ भी हाथ में नमक की डिबिया लिये खड़ी हैं, काम पड़ते ही झट निकालकर भुरभुरा देंगी। बेचारे बालों में हाथ फेर रहे थे, शायद हलुए का घी पोंछ रहे हों। माँ और मौसी को यों अपना मन्तव्य प्रकाशित करते सुना तो लगा कि इस महँगी के जमाने में भी जैसे किसी ने उन पर बहुत-सा मट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी हो। बालों को किसी दृढ़ संकल्प के साथ तानते हुए भुनभुनाये—मकान नहीं तुमको तो महल मिला जाता है !

माँ ने मुझको लक्ष्य करते हुए कहा—बेटा, हमारे बाराबंकी में भी मकान की तकलीफ है, लेकिन ऐसी तकलीफ तो वहाँ भी नहीं।

रामचन्द्र को दूसरी गोली लगी। चिढ़कर बोले—हाँ तो यह बाराबंकी नहीं अलाहाबाद है, प्रयागराज जहाँ लोग मरने के लिए भी आते हैं और जीने के लिए भी और कुछ ऐसे भी जो मकान तलाशने की इसी हड़बड़ी में अब तक नहीं तय कर पाये हैं कि दोनों में से क्या करें !

अम्मा ने क्रुद्ध होकर कहा—कैसी बात बोलते हो मुन्नी।

मुन्नी तो गरम तवा हो रहा था। यह बात उस पर पानी की एक बूँद की तरह पड़ी और छन्न से हो गयी—मैं तुम लोगों से पूछता हूँ कि मुझे बिना बताये तुम इस तरह क्यों चली आयीं ?

प्रतिवादी निरुत्तर था।

रामचंद्र ने मार्शल जुकोव की आधुनिकतम रणनीति के अनुसार दुश्मन को एक बार दबा पाने पर फिर उभरने का मौका न देते हुए ताबड़तोड़ चोटों पर चोटें मारना शुरू किया—तुमने क्या यह समझा था कि मैं झूठ बोल रहा हूँ ?

मौसी और अम्मा दोनों की समवेत मुद्रा से यह स्पष्ट था कि वे क्रमशः अपने भांजे और पुत्र पर झूठ बोलने का लांछन तो कभी लगा ही नहीं सकतीं, उँहुक्, कभी नहीं, मुन्नी कभी झूठ बोल सकता है, पूरब का सूरज चाहे पच्छिम—

परम धनुर्धर रामचन्द्र ने अपने पहले तीर को निशाने पर लगा जान, दूसरा तीर चलाया—तब क्या समझा था तुमने, मुझे तुमसे चिढ़ हो गयी है ? मैं तुम्हारा चेहरा नहीं देखना चाहता, तुम्हें बुलाना नहीं चाहता ?

दोनों बहनें चित्रलिखित-सी खड़ी थीं—झंझा और तूफान की इस घड़ी में एक दूसरे को सहारा देती हुई। दोनों के मुखमंडल पर एक अत्यन्त निरीह भाव खेल रहा था। एक दूसरे को दृष्टिभर देखकर उन्होंने मानों घोषणा की—मुन्नी हमेशा से बहुत मुहब्बती रहा है। मुन्नी में यह बात तो है।—और उनके मुखमंडल पर जैसे वात्सल्य रस की गगरी छलक गयी।

पर वात्सल्य की उस अपूर्व छटा ने भी रामचन्द्र की क्रोधाग्नि में शायद घी का ही काम किया। लेकिन अब उसने अपने बिगड़ैल मन-तुरंग को वश में करते हुए, शब्दों को अलग अलग तोड़कर, अपनी बात को खूब समझाते हुए कहा—चट मँगनी पट ब्रियाहवाला जमाना अब गया। तुमने सोचा होगा, हाँ हाँ ठीक लिखता होगा मुन्नी, होगी मकान की दिक्कत, जरूर होगी, लेकिन ऐसा भी क्या, हम लोग पहुँच जायँगे तो आप ही एड़ीचोटी का जोर लगायेगा, अभी मुमकिन है पूरी कोशिश भी न करता हो।.....

कुछ कहने के लिए मा के होंठ फड़के लेकिन फड़ककर ही रह गये, उससे ज्यादा कुछ न कर सके। रामचन्द्र हमेशा से ऐसा ही है, जो काम करता है पूरे दिलोजान से, और फिर वह किसी को मैदान में टिकने थोड़े ही देता है। रामचन्द्र सड़क कूटनेवाले इंजन की तरह अपनी बातें कूट-कूटकर मा और मौसी के दिमाग में बिठाल देना चाहता था जिसमें फिर कभी उनसे यह भूल न हो। इस समय रामचन्द्र अपने वर्तमान की नहीं भविष्य की रक्षा कर रहा था। वर्तमान को तो साँप ने डस ही लिया।

चालिस सेर का एक मन और सत्ताइस मन का एक टन, रामचन्द्र ने सौ टन का हथौड़ा मा और मौसी के सिर पर पटकते हुए अपनी बात समाप्त की—अब हुआ न वही जिसके डर के मारे मैंने चिट्ठी लिख दी थी। अब तुम कुछ जानती बूझती तो हो नहीं, गाँव और शहर से बड़ा फर्क होता है— हाँ हाँ बाराबंकी अलाहाबाद के मुकाबले गाँव ही है।

मौसी ने प्रतिवाद करते हुए कहा—नहीं बाराबंकी भी कोई छोटा शहर नहीं है।

रामचन्द्र ने देखा कि दुश्मन हथियार डालने के बजाय फिर सर उठा रहा है। उसे फिर तलवार उठानी पड़ेगी। बोला—हाँ हाँ तुम्हारा क्या बिगड़ा, मरन तो मेरी हुई। मकान ढूँढ़ते ढूँढ़ते.....

बगलवाले घर के कोठे पर बनिये की स्थूलांगी लड़कियाँ अपना 'फोनू-ग्राफ बाजा' बजा रही थीं—

बिरहा अगिन जला—य। बनिये का तो ग्रामोफोन, कुछ बिगड़ गया था, रेकार्ड आगे खिसकता ही न था और बेतहाशा बजाये जा रहा था—

बिरहा अगिन जला—य, बिरहा अगिन जला—य और फिर भारतीय बैंड के झय्यम झय्यम के ढंग पर जल्दी जल्दी बजाने लगा—जलाय जलाय जलाय जलाय.....